ستمبر ۲۰۰۸ء

ماہنامہ شعاعِ عمل لکھنؤ

قَالَ اللّٰہُ تَبَارَکَ وَتَعَالٰی قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰہِ نُوْرٌ وَ کِتَابٌ مُبِیْنٌ

بے شک تمہارے پاس اللہ کی طرف سے نور آیا ہے اور روشن کتاب

مؤسسۂ نور ہدایت حسینیہ غفران مآب لکھنؤ۔۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postel Regd.No. SSP/LW/NP-75/2008-10
P.O. Chowk, Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

SHUA-E-AMAL

Lucknow Sep-2008

शुआ-ए-अमल

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ

NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufran Maab, Chowk LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA, Phone : 2252230

वर्ष–5

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2008-10
P.O. Chowk. Dispatch Date: 2 & 6 of every month

अंक – 3

माह सितम्बर – 2008 लखनऊ

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन की
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

शुआ-ए-अमल

"लखनऊ"

संरक्षक
मौलाना सै. कल्बे जवाद नक़वी साहब

सम्पादक
सै. मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जायसी

सलाहकारी परिषद
प्रोफ़ेसर अल्लामा सै0 अली मुहम्मद नक़वी, प्रोफ़ेसर सै0 हुसैन कमालुद्दीन अकबर, प्रोफ़ेसर सै0 इमरान हैदर, मु0 र0 आबिद, सैय्यद समीउल हसन वसीम, तज़्हीब नगरौरी

वार्षिक – 200 रु   मिलने का पता   क़ीमत – 20 रु

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन
इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ – 3 (उ.प्र.) भारत फोन न0 0522–2252230

सै. कल्बे जवाद नक़वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ–ए–अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ–3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै0 मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ जाएसी'।

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

न0	मज़मून लेखक	पेज न0
1–	रमज़ान का महीना और शबे क़द्र	
	इमादुल उलमा अल्लामा सै0 मुहम्मद रज़ी साहब	3
2–	मक़सदे हुसैन	
	सैय्यिदुल उलमा के ख़ुतबे	5
3–	फ़ुरू–ए–दीन	
	मौलाना सै0 इब्ने हसन साहब क़िब्ला	10
4–	इत्तेहाद	
	हुज्जतुल इस्लाम वलमुस्लिमीन मौलाना सै0 हसन नक़वी इज्तेहादी	13
5–	मुख्य समाचार	
	इदारा	15

रसूले अकरम स0 ने फ़रमाया

1– तुम में सबसे अच्छा वह है जिसने कुरआन का पढ़ना सीखा और दूसरों को पढ़ाया।

2– जिसकी बोलचाल कुरआन और घर मस्जिद है अल्लाह उसके लिए जन्नत में घर बनाता है।

रमज़ान का महीना और शबे क़द्र

इमादुल उलमा अल्लाम सै0 मुहम्मद रज़ी साहब

रोज़ा अगर किसी दिल और ज़मीर को पाक न कर सके तो वह सच्चा रोज़ा नहीं है। यानी वह रोज़े की सिर्फ़ एक शक्ल और सूरत है जिसमें रूह नहीं जो उसका अस्ल मक़सद नहीं है। इसीलिए कुरआने हक़ीम ने जहाँ रोज़े का हुक्म दिया है साथ ही "ताकि तुम परहेज़गारी इख़्तियार करो" फरमाकर यह भी ज़ाहिर कर दिया कि इस्लामी रोज़ा सिर्फ़ फ़ाक़ा करने का नाम नहीं बल्कि इसमें परहेज़गारी और तक़वे की रूह होती है। दूसरे लफ़्ज़ों में रोज़े का सबब यह होता है कि इन्सान इसकी वजह से अपने ज़मीर में एक ऐसी हालत पैदा कर सके जिसके बाद उसको गुनाहों से नफ़रत और नेकियों से मुहब्बत होने लगे। रोज़े में जहाँ और बड़े फ़ायदे हैं वहाँ एक बड़ा फ़ायदा यह भी है कि वह आपस में मुहब्बत और हमदर्दी को बेपनाह बढ़ा देता है और अगर यह बात नहीं है तो उसे पैदा कर देता है।

यह बात सब ही जानते हैं कि जब तक किसी पर ख़ुद मुसीबत और तकलीफ़ नहीं आती उस वक़्त तक उसे दूसरों की तकलीफ़ का एहसास नहीं होता इसीलिए जब कोई रोज़ा रखता है तो उसके दिल में उन भूखों का भी ख़्याल आ ही जाता है जो ज़िन्दगी की आसानियों से महरूम हैं और जो ग़रीबी और फ़ाक़े में ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं। इस तरह रोज़ा उस एहसास को जगाता है और दुखी इन्सानियत से हमदर्दी का शौक़ पैदा करता है। हज़रत सरवरे काएनात[स0] अपने एक मशहूर ख़ुत्बे में फ़रमाते हैं: यह महीना रहमतों और बरकतों का है। मुसलमानों के लिए ज़रूरी है कि वह ख़ासकर ग़रीबों और बेसहारों की मदद करें। बड़ों का अदब करें, छोटों पर मेहेरबानी की नज़र रखें, अपनी ज़बान को बुरी और बेकार बातों से महफ़ूज़ रखें, कानों और आँखों को गुनाह से बचाएं, यतीमों पर रहम करें और अपने गुनाहों से तौबा और इस्तेग़फार करें। इसके बाद इरशाद हुआ: "जो शख़्स किसी दूसरे मोमिन को रोज़ा इफ़तार कराता है ख़ुदा उसको एक गुलाम आज़ाद करने का सवाब देता है। और उसके गुनाहों को माफ़ कर देता है।" यह सुनकर सहाबियों[रज़ि0] ने फ़रमाया: हुज़ूर[स0]! हम बहुत से ऐसे ग़रीब और मुफ़लिस लोग हैं जो इतनी ताक़त नहीं रखते कि दूसरों के लिए इफ़तारी का इन्तिज़ाम कर सकें। आप[स0] ने फरमाया: "अगर तुम रोज़ेदार को इफ़तार के लिए खजूर का एक टुकड़ा ही दे दो या पानी का एक घूँट ही पिला दो तब भी तुम्हें यही सवाब मिलेगा क्योंकि सवाब तो दिल की नियत और ख़ुलूस पर दिया जाता है।

रसूल[स0] का इरशाद है कि जो शख़्स इस महीने में लोगों के साथ हमदर्दी और बेहतरीन अख़लाक़ का बर्ताव करता है क़यामत के दिन उसके क़दम "पुले सिरात" पर नहीं डगमगाएंगे और वह आसानी के साथ उस पर से गुज़र जाएगा।

हक़ीक़त में पूरे साल यही एक ऐसा महीना है जिसमें इस्लामी तालीमात पर अमल करने और अमल सीखने का बेहतरीन मौक़ा मिलता है। रोज़े का असली मक़सद इन्सान का

जिस्मानी और रूहानी सुधार है। इसलिए हमें इस पाक और बरकत वाले महीने में दो बड़े रास्ते दिये गये हैं एक कुरआन करीम दूसरे यही रोज़ा। रोज़ा हमारी रूह को जगाता है, हमारे मुर्दा एहसास में नई ज़िन्दगी पैदा करता है और हमें इस क़ाबिल बना देता है कि हम कुरआन पाक की हिदायत से फ़ायदा उठा सकें, उसके नूर से अपने दिल व दिमाग़ और ज़मीर के अन्धेरों को मिटाकर अपनी ज़िन्दगी में ना ख़त्म होने वाली रौशनियाँ पैदा कर सकें, अपने किरदार को दीने मुहम्मदी[स०] के निज़ाम पर ढालने की कोशिश करें और अपने सोए हुए एहसासों को भाइचारगी और हमदर्दी और रहम व करम की उमंगों से भर सकें। रोज़ा रखने से इन्सान में जो सब्र व शुक्र और बर्दाश्त की ताक़त पैदा होती है वह ज़िन्दगी के हर मोड़ पर काम आती है। ग़रज़ रोज़ा सिखाता है— मुसीबतों पर सब्र करना, भूख और प्यास को बर्दाश्त करना और एक दूसरे के दुःख़—दर्द का एहसास। अमन व आराम की ज़िन्दगी गुज़ारने वाले शहरी हों या जंग के मैदान के बहादुर सिपाही, रोज़ा हर मुसलमान को दूसरे की मुसीबत, भूख और प्यास की तकलीफ़ का एहसास दिलाता है और उसमें कुर्बानी और आपसी हमदर्दी की वह उमंग पैदा कर देता है जो किसी दूसरे रास्ते से मुमकिन नहीं हो सकती। वह पाकीज़गी की एक ऐसी हालत पैदा करता है जो रोज़ेदार के पूरे एहसास पर छा जाती है और सहर की शुरुआती रौशनी से लेकर शाम के अन्धेरे तक बन्दे और उसके अल्लाह में एक अजीब सा रिश्ता हो जाता है जो किसी और तरह मुमकिन नहीं होता।

बेशक रोज़े की यही ज़रूरत है कि हम अपने आपको गुनाहों से बचाएं। उस रोज़े में हरगिज़ इस्लामी रूह न होगी जिसमें गुनाहों से परहेज़ न हो, वह लोग बड़े बदक़िस्मत हैं जो इस मुक़द्दस महीने में उसकी बड़ी बरकतों से सिर्फ़ महरूम ही नहीं रहते बल्कि अपने ज़मीर को और ज़्यादा गिरावट और अन्धेरे में पहुँचा देते हैं। मिलावट करना, नाजाएज़ फ़ायदा लेना, झूठ बोलना, चोरी करना, दूसरों के साथ ज़बान या हाथ से तकलीफ़ देना, बुरे काम करना, धोखा देना और इसी तरह दूसरी बातें वैसे भी गुनाह हैं फिर रमज़ान के महीने में इन गुनाहों की सख़्ती और भी बढ़ जाती है। इस बिना पर हर मुसलमान के लिए ज़रूरी है कि वह अपने ज़मीर को पाक रखे और इस पाक महीने की बुलन्दी और बुज़ुर्गी का पूरा ख़याल रखे।

ज़माने के इन्क़ेलाब हमारे लिए नसीहत का सामान लाते रहते हैं और कुछ दूर नहीं कि कभी हम भी दूसरों के लिए नसीहत बन जाएं इसलिए हमारा फ़र्ज़ है कि हम उस अल्लाह के गुस्से और क़हर से डरें जो हमारी बुराइयों को अच्छी तरह जानता है और उससे हमारी कोई बात छुपी नहीं रह सकती। आज की मुसीबतें और आफ़तें आख़िरी नहीं हैं वह कल भी आ सकती हैं। हज़रत अमीरुलमोमिनीन अली[अ०] इब्ने अबीतालिब[अ०] ने फ़रमाया हैः "अल्लाह से जंग न करो क्योंकि तुम न तो उसके गुस्से और क़हर का मुक़ाबला कर सकते हो और न उसकी रहमत से अलग रह सकते हो।" हज़रत अली[अ०] के इस इरशाद में कितनी गहराई पायी जाती है! बेशक कमज़ोर और बेबस इन्सान ख़ुदा से मुक़ाबला नहीं कर सकता और उसके लिए बस यही एक रास्ता है कि वह ख़ुदा के हर हुक्म के सामने सर झुका दे वह अगर अल्लाह को छोड़कर जाना चाहेगा तो उसकी ख़ुदाई से निकल कर किधर जाएगा!

हर मुसलमान के लिए ज़रूरी है कि वह इस बरकत वाले महीने से फ़ायदा उठाए और

(बक़िया............पेज–12 पर)

सैय्यिदुल उलमा के ख़ुतबे (1)

मक़्सदे हुसैन (अ०)

(वह तक़रीर जो सातवीं मुहर्रम 1360[हि०] में ऑल इण्डिया रेडियो स्टेशन लखनऊ से प्रसारित हुई)

फूलों की सेज पर आराम की नींद सोना आसान है मगर काँटों पर बिस्तर लगाए रखना बहुत मुश्किल है। ख़ुशी को हर एक की तबीअत ढूँढती है मगर ग़म के साथ निभाना बहुत मुश्किल है। हाथ में लगी हुई फाँस जब तक निकल न जाए चैन नहीं आता। फिर दिल में चुभे हुए काँटे को सीने से लगाए रखना कहाँ मुमकिन है। इसी से आप समझ सकते हैं कि कर्बला का वाक़िआ बस एक दर्द भरी कहानी नहीं था बल्कि इसमें इन्सानी ज़िन्दगी के जरासीम छुपे थे इसलिए इन्सानों की दुनिया में इसका चर्चा होता और फैलता रहा।

इस वक़्त जबकि हम हुसैन[अ०] के मक़सद को समझने और समझाने खड़े हुए हैं, दुनिया के बहुत से हिस्सों में हुसैन[अ०] का ग़म सुनाया जा रहा है और 61[हि०] में कर्बला की सरज़मीन पर जो क़ुर्बानी दी गई है उसे आज बारह सौ निन्नान्वे साल हो चुके हैं और एक साल के बाद 1361[हि०] का मुहर्रम आएगा जिसमें पूरे तेरह सौ साल हो जाएंगे और इसलिए उस मौक़े पर दुनिया के बहुत से हिस्सों में एक बहुत बड़ी यादगार मनाने का इन्तिज़ाम हो रहा है।

इस तेरह सौ साल लम्बे ज़माने ने कितनी करवटें लीं। आँधियाँ चलीं और निकल गईं, सैलाब आए और गुज़र गए मगर हुसैन[अ०] की याद ज़िन्दा रही और आज भी ज़िन्दा है। मालूम होता है कि हुसैन[अ०] के नाम और उनके काम ने इन्सानियत के दिल में अपनी जगह बना ली। होंटों पर हुसैन[अ०] का नाम, दिल में हुसैन[अ०] की याद और दिमाग़ को हुसैनी मक़सद की तलाश है। ये शख़्सी और ज़ाती मक़सद नहीं है। अगर ऐसा होता तो किसी को क्या पड़ी थी कि ज़िन्दगी उसके याद में लगाए रखे। किसी मुसीबत के सताए हुए को देख कर निगाह फिर जाना या दिल में हमदर्दी से कसक पैदा होना एक वक़्ती चीज़ है मगर उसे मुस्तक़िल हैसियत नहीं मिल सकती, हुसैन[अ०] का मक़सद इन्सानियत से जुड़ा था और इज्तेमाओी हैसियत रखता था इसलिए इन्सानियत ने अपना दिल चीर कर इस याद को महफ़ूज़ कर लिया।

अब आप चाहते होंगे कि मैं इस मक़सद को खुले लफ़्ज़ों में बयान कर दूँ। अच्छा सुनिये! मगर आपको मेरे साथ थोड़ी दूर तक चलना पड़ेगा।

आपको यह तो मालूम होगा कि हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा ने समाजियात और ज़िन्दगी के तौर तरीक़ों में एक इन्क़ेलाब का पैग़ाम पहुँचाया जिसका नाम था इस्लाम। इस्लाम ने ज़िन्दगी के हर हिस्से में बहुत अहम बदलाव किये और सबसे बढ़कर यह कि इन्सानियत को भाईचारगी और बराबरी का सबक़ पढ़ाया। वह हदें और फ़ासले जो इन्सानों में क़ायम हो गए थे जिनसे ख़ुदा की मख़लूक़ ऊँचे और नीचे दो दर्जों में बंट गई थी। इस्लाम ने उन सभी हदों और फ़ासलों को ख़त्म कर दिया और तमाम आदमियों को एक अकेले ख़ुदा की इबादत की दावत दी।

कौन नहीं जानता कि दुनिया में ''ताक़त हक़ है'' का कलमा हमेशा पढ़ा गया और इन्तेहा है कि आज जब कि दुनिया कल्चर में बड़े ऊँचे दर्जे पर बतलाई जाती है। आज भी ताक़त ही का बोलबाला हो रहा है और उसी का नतीजा है कि इन्सानियत के परख़्चे उड़ रहे हैं और इन्सानियत के दामन की धज्जियाँ हवा में तितर–बितर दिखाई देती हैं।

अरब में शुऊबियत यानी क़ौम या नस्ल के फ़र्क़ का ख़याल बहुत ज़्यादा था। वह अपने सामने दूसरों (ग़ैर अरब) को बहुत ही नीच समझते थे और ख़ुद आपस में क़ानूनी अहकाम, और फ़ौजदारी की क़ानून व ताज़ीरात तक में बड़े और छोटे का फ़र्क़ बना लिया था। सस्ती जानें तौल में उनके बराबर नहीं समझी जाती थीं। उनमें माल व दौलत, क़ौम व क़बीलों की ज़्यादती ख़ानदानी बरतरी और सरदारी वह चीज़ें थीं जो इज़्ज़त की पहचान बना ली गईं थीं और जो लोग इन चीज़ों से महरूम थे उनके साथ जानवरों जैसा सुलूक किया जाता था।

यह ताक़त की पूजा हज़ारों तरह के एक साथ किये जाने वाले गुनाहों की बुनियाद थी और बहुत सी ख़राबियों के सोते उसी चश्मे से फूट रहे थे।

हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] ने आकर पहली ही बार में इन हदों और फ़ासलों को ख़त्म किया और बड़ाई का एक नया रूप दुनिया के सामने पेश किया। उन्होंने कहा कि आदमी सब एक हैं, फ़र्क़ तो इन्सानी ज़िम्मेदारियों के अदा करने में है, जो इन ज़िम्मेदारियों को सबसे ज़्यादा अदा करता है वही सबसे बड़ा आदमी है। यह कोई मामूली बात नहीं थी। इससे उन तमाम लोगों की हुकूमत और ताक़त को गहरी चोट पहुँची जो इज़्ज़त व हुकूमत के बटवारे में पहले काफ़ी हिस्सा रखते थे। उन्होंने डट कर इस्लाम का मुक़ाबला किया और पैग़म्बर[स०] को उनके हाथों बड़ी तकलीफ़ें उठानी पड़ीं। इस बारे में बद्र, ओहद और ख़न्दक़ की लड़ाईयाँ मशहूर हैं और यह याद रखने की बात है कि इन लड़ाईयों में रसूल[स०] के मुक़ाबले में बनी उमय्या का लीडर अबूसुफ़ियान आगे–आगे था। पैग़म्बर[स०] की जीत हुई और यह लोग नाकाम हुए आख़िर में उनको हथियार डाल देना पड़े और हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] के सामने सर झुका देना पड़ा।

पैग़म्बर[स०] के ज़माने में किसी को यह मौक़ा नहीं मिल सकता था कि वह इस्लाम के उसूल में कोई बदलाव कर सके। आप अपने मिशन के बड़ी सख़्ती के साथ ख़ुद पाबन्द भी थे और दूसरों को पाबन्द बनाते भी थे। उस वक़्त जब अरब की सारे क़बीलों की तरफ़ से रुपया खिंच–खिंच कर आपके पास आता था और हज़ारों आदमी आपका हुक्म मानना फ़ख़्र समझते थे उस वक़्त भी आपने फ़क़ीरों के साथ उठना बैठना, फटे पुराने कपड़े पहनना और मिलने वालों से बराबरी का सुलूक करना नहीं छोड़ा। आपने अपनी मस्जिद का मोअज़्ज़िन एक हब्शी को बनाया था जिसे अरब वाले बहुत नीची निगाह से देखते थे मगर रसूल[स०] ने उसको बड़ी इज़्ज़त दे रखी थी। आपने अपनी फूफीज़ाद बहन की शादी एक आज़ाद किये हुए गुलाम के साथ कर दी, फिर एक वक़्त आया कि आपने उसी गुलाम के लड़के को बड़े ऊँचे ख़ानदान वाले अरबों का सरदार बना दिया, इस पर लोग बहुत नाराज़ हुए मगर आपने एक न सुनी और अपनी बात पर डटे रहे जिन लोगों की आप बड़ी तारीफ़ करते थे और बहुत इज़्ज़त करते थे उनमें बहुत से ग़रीब, कमज़ोर और परदेसी लोग थे। सलमान फ़ारसी जो ईरान के रहने वाले थे रसूल[स०] के साथ इतनी खुसूसियत रखते थे जो किसी दूसरे को मुश्किल से हासिल थी। यह सब इसलिए था कि ज़हन में बदलाव आए और इन्सानियत सोने

चाँदी के गंगा–जमुनी फंदे और ज़न्जीरों की क़ैद से आज़ाद हो।

अफसोस कि पैग़म्बर की ज़िन्दगी ने ज़्यादा साथ न दिया और आप दुनिया से चले गये। आपका मिशन इस हैसियत से पूरा हो गया था कि आप ने उसका नमूना दुनिया के सामने पेश कर दिया और कुछ लोग अमली तौर से उसके पाबन्द हो गए मगर आपको मालूम है कि ज़्यादातर लोगों के ज़हन का बदलाव और उस बदलाव के पक्के होने के लिए बड़ा वक़्त चाहिए होता है।

रसूल[स०] के बाद अभी थोड़े दिन गुज़रे थे कि बनी उमय्या की हुकूमत की बुनियाद पड़ गई। शुरु–शुरु में सिर्फ एक सूबे के गवर्नर की हैसियत से थी मगर धीरे–धीरे इसके असरात में तरक़्क़ी होती गई।

शाम में इस ख़ानदान की हुकूमत उस जमाअत के सहारे से थी जो हमेशा पैग़म्बरे इस्लाम[स०] से लड़ती रही थी और आख़िर में बेबसी की हालत में सर झुकाने पर मजबूर हुई थी।

इसका फैसला हर शख़्स कर सकता है कि अपनी हुकूमत हो जाने के बाद इस जमाअत के इरादे क्या होने चाहिए। मामूली दिल व दिमाग़ भी कहेगा कि उन्हीं हदों और फ़र्क़ों को वापस लाना जिन्हें पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने मिटा दिया था और उस जमाअत की हुकूमत और बादशाही पर जिसका बहुत गहरा असर पड़ा था। मगर चूँकि उस जमाअत की हुकूमत अब इस्लाम के साये में इस्लाम की नुमाइन्दगी में हासिल हुई थी इसलिए ज़रूरत थी कि यह उस पर्दे ही में अपने इरादों को पूरा करें और यह उससे ज़्यादा ख़तरनाक था कि खुलकर एक दुश्मन की हैसियत से अपने इरादों का एलान कर देते।

समझने वालों ने समझा कि इस्लाम की सादगी और इस्लाम की बराबरी के बजाए हुकूमत और बादशाहत की शान पैदा हो रही है और दौलतमंदी की बुनियाद पड़ रही है, इस पर एहतेजाज भी हुआ और एहतेजाज का नतीजा था अबूज़रे ग़फ़्फ़ारी[रज़ि०] को मुल्क निकाला दिया जाना, रब्ज़ा के जंगल में भेजा जाना और रसूल के इस सहाबी का अकेले दम तोड़ना और दुनिया से कूच कर जाना। यह शुरुआत है उस जंग की जो कर्बला में पूरी हुई।

ज़माने में एक करवट ऐसी बदली कि इस्लाम की सरदारी हज़रत अली[अ०] को मिली आपको सियासी हुकूमत हासिल होना उस सादगी और बराबरी के उसूल को नये सिरे से लागू किया जाना था जो रसूले इस्लाम[स०] ने बनाया था, इसीलिए मुख़ालिफ़ जमाअत ने बग़ावत की और ताबड़तोड़ हंगामों और लड़ाईयों में आपको ऐसा उलझा दिया गया कि आप उन मक़सद को पूरा न कर सके जो आपके सामने थे। आख़िर मस्जिद में अली[अ०] का सर तलवार से दो टुकड़े हो गया और इस्लामी बराबरी का मिशन चलाने वाला दुनिया से चल बसा।

आपके बेटे हज़रत हसन[अ०] को वह ज़माना मिला जब शाम की हुकूमत को बड़ी ताक़त हासिल हो चुकी थी, आपको जंग के ज़रिये से कामयाबी की कोई सूरत न दिखाई दी तो सुल्ह करके मुख़ालिफ़ की जंगी कारवाईयों को उसूल के शिकंजे में क़ैद किया और आपने अपनी समझदारी से काम लेकर यह बड़ी शर्त रख दी कि शाम के हाकिम को अपने बाद किसी को अपना जानशीन और नाएब बनाने का हक़ न होगा बल्कि उसके बाद हुकूमत बनी हाशिम की तरफ़ वापस आएगी। यह ऐसी शर्त थी जिसने मुस्तक़बिल को किसी हद तक बचा लिया था मगर सियासत की दुनिया में सच्चाई और वादे की पाबन्दी तो कोई चीज़ नहीं। वादे किये जाते

हैं तोड़ने के लिए और मुआहदे लिखे जाते हैं रद्दी की टोकरी में फेंकने के लिए। वही हुआ जो इस तरह की सियासत में होना था। कैसी शर्तें और कहाँ का मुआहेदा। हज़रत इमाम हसन[अ०] की ज़िन्दगी आख़िरी मक़सदों में रुकावट बन रही थी। आपको चुपके से ज़हर देकर शहीद कर दिया गया। यह भी एक कुर्बानी थी जो इस्लामी तहज़ीब की कुर्बानगाह पर नज़र हो गई।

अब उन लोगों में जो इस्लामी तहज़ीब की हिफ़ाज़त करने वाले हो सकते थे, सिर्फ़ हुसैन[अ०] की हस्ती बाक़ी थी। ज़ाहिरी तौर पर अब आपको क़दम आगे बढ़ाने का कोई मौक़ा न था। वह पूरी जमाअत जिसको साथ लेकर शाम की ताक़त से मुक़ाबला किया जा सकता था इमाम हसन[अ०] की सुल्ह के बाद बिखर चुकी थी और अब उसका इकटठा होना मुमकिन न था। वक़्ती सियासत की ग़ैर इस्लामी चाल देखकर दम घुटता था मगर आप इन्तेज़ार कर रहे थे कि मुआविया अपने बाद के लिए क्या सूरत इख़्तियार करते हैं।

ये न समझना चाहिए कि इस बीच हक़ के पुजारी बिल्कुल चुप रहे। बल्कि इस सख़्त अन्धेरी रात और इसके सन्नाटे में कभी–कभी इधर–उधर से चीख़ की आवाज़ सुनाई दे जाती थी मगर वह आवाज़ उसी तरह दबा दी जाती थी जिस तरह आप सुनते हैं कि हिटलर अपने मुल्क में हर मुख़ालिफ़ आवाज़ को दबा देता है। अम्र हक़ ख़ज़ाई और हजर इब्ने अदी और उनके दस ग्यारह साथियों का अन्जाम तारीख़ में आपके सामने है। याद रखिये कि इन लोगों को शाम के हाकिम से कोई ख़ानदानी दुश्मनी नहीं थी। सिर्फ उसूल का इख़्तेलाफ़ था जिसने दुनिया की इस फैली फ़ज़ा में उनके लिए जगह बाक़ी न रखी।

हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने इन वाक़ेआत पर एहतेजाज ज़रूर किया मगर फिर भी आप देख रहे थे कि आख़िरी शर्त का क्या अन्जाम होता है?

अब वक़्त भी आ गया कि अमीरे मुआविया ने अपने बाद के लिए अपने बेटे यज़ीद को जानशीन बना दिया। यह उन बातों में से आख़िरी बात थी जिसे मुआहेदे की शर्तों में महफ़ूज़ किया गया था।

यज़ीद के काम भी ऐसे थे जो इस्लाम के अहकाम से खुल्लमखुल्ला बग़ावत की तरह थे। इमाम हुसैन[अ०] ने इसको सख़्ती के साथ महसूस किया।

मुआविया भी समझते थे कि इस मामले में सबसे ज़्यादा जुड़ी हुई हस्ती हुसैन[अ०] की है। इसलिए उन्होंने कोशिश की कि आपको मिला लिया जाए मगर यह कोशिश नाकाम हुई। इमाम हुसैन[अ०] ने साफ़ कह दिया कि मैं इस कारवाई से इत्तेफ़ाक़ नहीं कर सकता। अमीर मुआविया का इन्तेक़ाल हो गया और यज़ीद तख़्ते हुकूमत पर बैठा तो उसके सामने सबसे पहले यही मसअला था कि हुसैन से बैअत हासिल की जाए। उसने मदीने के गवर्नर को लिखा कि हुसैन[अ०] से बैअत लो नहीं तो उनको क़त्ल कर दो। यह सख़्ती का पहला ही क़दम था जो हुसैन[अ०] के ख़िलाफ़ उठाया गया। हुसैन[अ०] इसके लिए बिल्कुल तैयार न थे। उन्होंने कहा कि मेरी जान जाए मुझे गवारा है मगर मैं इस हुकूमत के सामने सर नहीं झुकाऊँगा।

ये वह वक़्त था जब एहसास बिल्कुल मर चुके थे। फ़ज़ा में बिल्कुल सन्नाटा था। जिन लोगों से मुख़ालिफ़त का अन्देशा हो सकता था उनमें कुछ का गला घोंटा जा चुका था और कुछ के ज़मीर ख़रीद कर उनकी ज़बानों को बन्द कर दिया गया था। सुनहरी तलवार की झन्कार और रुपये और अशरफ़ी की खनक ने बड़े बड़ों के दिल अपनी तरफ़ झुका लिए गये थे। उस वक़्त हुसैन[अ०] इस आख़री इक़दाम के लिए तैयार हो रहे थे जो बनी उमैय्या के ज़ुल्मो सितम के महल

को ज़मीन पर गिरा दे।

इमाम हुसैन[अ०] के लिए यह नामुमकिन था कि वह ताक़त का मुक़ाबला ताक़त से करते। उन्होंने जंग का एक नया तरीक़ा निकाला जो उनसे पहले दुनिया ने नहीं देखा था। वही उनके मक़सद के लिए फ़ायदे वाला और कारगर भी था। आप अच्छी तरह जानते थे कि मुसलमानों की आँखों पर पर्दे पड़ गये हैं। उनके ज़हन जम चुके हैं उनके एहसास ठण्डे पड़ गये हैं उनमें यह समझ बाक़ी न रही कि बनी उमय्या के काम और बातें इस्लामी तरीक़े के ख़िलाफ़ हैं।

इसकी बड़ी वजह इस्लाम के नाम का वह पर्दा जो उनके चेहरों पर पड़ा हुआ है। हुसैन[अ०] चाहते थे कि उन्हें एक ऐसा सख़्त छींटा दें कि उनके एहसास होश में आ जाएं। और चेहरे का पर्दा हट जाए। उसकी असली बनावट सामने आ जाए और दुनिया देख ले कि इस बादशाही सियासत के आख़री क़दम कहाँ तक जा सकते हैं।

उन्होंने इसके लिए फौज और लश्कर इकटठा नहीं किया। उन्होंने वह इबादतगुज़ार और मुत्तक़ी लोग ढूँढे जिनमें का हर शख़्स अपने अख़्लाक़ व ख़ूबियों में सच्चे इस्लाम का नुमाइन्दा था और मुल्क में जिसकी सच्चाई और ईमानदारी को हर शख़्स मानता था। उन्होंने रसूल[स०] के ख़ानदान के जवान और बच्चे यहाँ तक कि दूध पीते बच्चे को अपने साथ ले लिया और रसूल[स०] के घराने की पाकदामन औरतें –जिनमें ख़ास रसूल[स०] की हक़ीक़ी नवासियाँ मौजूद थीं– अपने साथ लीं। हुसैन[अ०] ने अपने दुश्मन की फितरत को ख़ूब पहचान लिया था। वह उसके सख़्ती के इमकान को बढ़ा रहे थे। दुनिया ने देख लिया कि हुसैन[अ०] ने जो सामान अपने साथ लिया था वह सब हुसैनी मक़सद को पूरा करने में लगा।

बूढ़े, जवान और बच्चे क़त्ल हो गए। दुश्मन के ज़ुल्म का आख़िरी तीर बाक़ी था। हुसैन[अ०] ने उसके लिए निशाना ढूँढ दिया, रबाब की गोद से छः माह का बच्चा ले लिया। सबसे आख़िर में अपनी गर्दन को भी पेश कर दिया और अपने बाद शहज़ादियों को क़ैद होने के लिए छोड़ा।

यह सब हुआ और समझ बूझकर हुआ। हुसैन[अ०] अपने मक़सद में कामयाब हुए। मुसलमानों की आँखें खुल गईं और यज़ीदियत और इस्लाम दो अलग–अलग चीज़ें हो गईं। हुसैन[अ०] का मक़सद भी बस यही था। वह चाहते थे कि इस्लामी कल्चर पर जो उमवी बादशाहत का रंग चढ़ रहा है जिससे उसकी हदें और फ़ास्ले मिटते जा रहे हैं, यह रंग उतर जाए। दुनिया यह समझ ले कि इस्लामी कल्चर वह नही है जो दमिश्क़ के शाही महल में नज़र आता है, जहाँ शराब के जाम चल रहे हैं और ख़ूबसूरत चेहरों का झुरमुट लगा है, जहाँ तमाम लोगों से दौलत समेटी जाती है और वह ख़लीफ़ा की रंगरलियों पर ख़र्च होती है, जहाँ ऐश व आराम की भीड़ में ग़रीबों की आवाज़े सुनी नहीं जाती और जहाँ इन्साफ को कुन्द (बिना धार की) छुरी से हलाल किया जाता है। हुसैन[अ०] ने दिखलाया कि इस्लाम का कल्चर वह है जिसे कर्बला के मैदान में पेश कर दिया गया, जहाँ एक हबशी गुलाम भी ज़ख़्मी होकर घोड़े से गिरता है और इमाम[अ०] को आवाज़ देता है तो इमाम[अ०] उसके सरहाने जाते हैं और सर उठाकर गोद में रखते हैं। गुलाम की रूह आक़ा की गोद में जिस्म से जुदा होती है।

यज़ीदी ताक़तें दुनिया में बहुत पैदा हो सकती हैं और हर क़ौम में पैदा होती हैं मगर हुसैनी मिशन जो कर्बला की ज़मीन पर पूरा हुआ वह हर ज़माने में यज़ीदियत की हार के लिए काफ़ी है, लेकिन शर्त यह है कि हुसैन[अ०] के कारनामों को दुनिया याद रखे और उससे सबक़ हासिल करे।

फ़ुरू-ए-दीन

मौलाना सै0 इब्ने हसन जारचवी साहब क़िब्ला

नमाज़

अगर हम इस्लामी इबादातों पर ग़ौर करें तो यह हक़ीक़त साफ तौर पर सामने आ जाती है कि इनके अन्दर रूहानी फायदों के अलावा सियासी, मआशी और कल्चरल फ़ायदे भी छुपे हुए हैं। खुदा की बन्दगी और नमाज़ के तरीक़े दुनिया के सारे मज़हबों में मौजूद हैं, मगर इस्लामी नमाज़ सब से निराली शान रखती है। यहाँ यहूदी रिब्बियों और ईसाई राहिबों को वह मुराक़बा नज़र नहीं आता जो ख़ानख़ाहों के कोनों में बैठकर सरअन्जाम पाता था, न बुद्ध मत के भिक्षुओं और हिन्दू धर्म के साधुओं की तरह यह इबादत का तरीक़ा विहारों या ऐकान्त कुटियों का मोहताज नहीं है, न यहाँ कई तरह के मन्दिर और इबादतगाहें हैं। जो अलग–अलग खुदाओं और देवताओं की पूजा के लिए ख़ास हों, न दर्जों और तबक़ों का इम्तियाज़ है कि जिस का मुज़ाहेरा बराबरी की रूह को धो दे। आइये मस्जिद के अन्दर आकर देखिये। छोटे बड़े, अमीर ग़रीब, काले गोरे, अरब और ग़ैर अरब सब एक सफ़ में खड़े हैं। जिसको जहाँ जगह मिल गई खड़ा हो गया। सजदे के वक़्त कहीं फ़क़ीर के पैर बादशाह के सर के आगे हैं, और क़याम के वक़्त कहीं मोटे–मोटे होंट वाला काला हब्शी ग़ुलाम गोरे आक़ा के साथ कंधे से कंधा मिलाये खड़ा है। सब एक ही ज़बान में अपने ख़ालिक़ से अर्ज़ व सवाल कर रहे हैं। मकान व ज़बान के फ़र्क़ और तबकों और दर्जों के सारे इम्तियाज़ यहाँ ग़ायब हैं। जोज़फ हील (Joseph Hell) ने अपनी किताब तमद्दुने अरब (The Arab Civilisation) में क्या ख़ूब फ़रमाया हैः–

"जिस किसी ने मुसलमानों को नमाज़ के वक़्त सफ़ों में खड़ा हुआ और हैरतअंगेज़ बराबरी, क़ायदे और सुकून के साथ रुकु सजदा करते हुए देखा है, वह इस मुनज़्ज़म इबादत के तरीक़े की तालीमी क़द्र व क़ीमत का एतेराफ किये बिना नहीं रहेगा। अगर हम (इस वक़्त) सिर्फ़ यह याद रखें कि (अरब) एक ऐसी माज़ूर क़ौम थे जो ग़ैर की मर्ज़ी के सामने झुकना पसन्द न करते थे, यह वह लोग थे जो इताअत के शौक़ से बिल्कुल अन्जान थे, तो फौरन हमको यह अन्दाज़ा हो जायेगा कि क़ानून और क़ायदे की रूह को जगाने के लिए यह इबादत का तरीक़ा कितना अहम है। यक़ीन मानिये कि इसीलिए यह कहा गया है कि मस्जिद ही इस्लाम की सबसे पहली फौजी तरबियतगाह है। जमाअत की नमाज़ों के वक़्त मोमिनों को एक दूसरे से मिलना जुलना एकता व इत्तेहाद की रूह को बढ़ाता है और इन्सानी बराबरी का शौक़ बढ़ाता था, अरब के मुल्क में यह ख़यालात बिल्कुल न थे।"

इस किताब में जगह–जगह यह बताया गया है कि इस्लाम दीने फ़ितरत है। इसकी यह ख़ूबी इबादत में भी अलग नज़र आती है। वह दूसरे मज़हबों की तरह इन्सान के फ़ितरी ख़यालात को नज़रअन्दाज़ नहीं करता। वह यह नहीं कहता कि तुम जंगलों, पहाड़ों की गुफ़ाओं, समुन्द्रों और दरयाओं के पानी में जाकर इबादत करो। या एक टाँग पर खड़े होकर रात–रात भर मंतर जपते रहो। वह इसकी इज्तेमाई बनावट (Gregarious Instinct) की रिआयत करता है। इसकी शहरी चाहत को

नज़र अन्दाज़ नहीं करता। ज़िन्दगी की दौड़ में जो मुश्किलें उसको पेश आती हैं उनको सामने रखता है। और नमाज़ का वह तरीक़ा बताता है जो एक तरफ बहुत आसान है और दूसरी तरह हर हैसियत से फ़ायदे वाला है। ज़रा नमाज़ के वक़्तों पर नज़र डालिये। जब आप रात भर के आराम से जागते हैं तो उस ख़ुदा के शुक्रिये को दोगाना अदा करते हैं जिसने आपको नींद की नेमत से नवाज़ा और उसके सुकून देने वाले असरात से आपकी रूह और जिस्म को सुकून दिया। खु दा का नाम लेकर आप अपना कारोबार शुरु करते हैं। ज़वाल का वक़्त आते–आते आपका जिस्म आराम और सुकून चाहता है अब आप थोड़ी देर के लिए कारोबार बन्द कर देते हैं और उस ख़ुदा के दरबार में हाज़िर होते हैं जिसकी दी हुई ताक़तों के बल बूते पर आप अपना कारोबार चलाते हैं।

इस ठहराव के बाद आप काम में लग जाते हैं और शाम को जब आप अपनी दिन भर की मेहनत से छुट्टी पाते हैं तो फिर अल्लाह के सामने अपना सर झुकाते हैं कि उसने यह दिन भलाई और आसानी के साथ गुज़ार दिया। फिर जब आप सोने के लिए जाने लगते हैं तो आख़िरी बार फिर अल्लाह के सामने सर झुकाते हैं और रात के भलाई और आसानी के साथ गुज़रने के लिए दुआएं माँगते हैं।

ऐश व आराम की ज़िन्दगी गुज़ारने वालों को इन रूहानी वक़्फ़ों के माद्दी फ़ायदों का एहसास हो या न हो मगर मज़दूर पेशा लोग जानते हैं कि मेहनत व मशक़्क़त के दौरान में यह वक़्फ़े कितना सुकून और आराम देने वाले होते हैं और इन वक़्फ़ों से मज़ा लेने के बाद थके मांदे बदन के हिस्सों में किस तरह नये सिरे से काम करने की ख़ूबी पैदा हो जाती है।

रोज़ा

पारसियों को छोड़कर दुनिया में शायद ही कोई क़ौम ऐसी हो जो "रोज़े" के फ़ायदों से इन्कार कर सके, या जिसके दीन व मज़हब में रोज़ा किसी न किसी शक्ल में मौजूद न हो। मगर इस्लामी रोज़े की शान सबसे अलग है। यहाँ रोज़ा भी एक साथ किया जाने वाला अमल और क़ौमी व मिल्ली काम की शक्ल बन गया है। आज जब यूरोप में जंग का बाज़ार गर्म है और लड़ने वाले आपस में एक दूसरे की नाकाबन्दी कर रहे हैं तो हम बार बार (Rationing) का नाम सुनते हैं। यानी ज़िन्दगी की ज़रूरतों और ख़ास कर खाने पीने की चीज़ों पर हुकूमत की निगरानी है, और हर शख़्स को "नपा शोरबा और गिनी बोटी" दी जाती है। इस्लाम अपने मानने वालों को हर साल महीने भर तक आधा खाना (Half Ration) पर रख कर एक तरफ तो उनके अन्दर फौजी ज़िन्दगी को बाक़ी रखता है और दूसरी तरफ किफ़ायत शिआरी, दिल मारना और दूसरों के दुख दर्द के एहसास की आदत डालता है। फ़र्ज़ कीजिये कि दुनिया में साठ करोड़ मुसलमान हैं और हर मुसलमान अपना ख़ाना औसतन चार आना फ़ी वक़्त ख़र्च करता है तो एक महीने में वह सात रुपये आठ आने बचा सकता है। अब इन सात रुपये आठ आने को साठ करोड़ मुसलमानों से गुणा कर दीजिये और देखिये कि मुसलमान अगर चाहें तो रमज़ान में कितनी बड़ी दौलत बचाकर दीन व मिल्लत के फ़ायदे के कामों में ख़र्च कर सकते हैं। जिन लोगों ने रमज़ान के महीने में अफतार के वक़्त मुसलमानों इज्तेमाआत, उनकी मस्जिदों की चहल–पहल और फिर ईद के इत्तेहाद परवर नज़ारे देखे हैं, वह अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि रोज़ों के इस इज्तेमाई मुज़ाहरे से तमद्दुन और सियासत के कैसे–कैसे नुकते हल होते हैं, और एकता और बराबरी को उससे कितनी ताक़त मिलती है।

अगर ग़ौर से देखा जाए तो इन्सान की सारी तबाहियाँ दो फितरी चाहतों की वजह से सामने आती हैं:– (1) खाना–पीना (2) जिन्सी

चाहत। रोज़ा इन्हीं दो फितरतों को क़ाबू में लाने की प्रेक्टिस है। जैसे रमज़ान का महीना मुसलमानों के लिए एक सालाना ट्रेनिंग कैम्प (तरबियतगाह) है जहाँ क़ायदे क़ानून की तालीम व तरबियत का सामान तैयार किया जाता है। नीचे दी हुई आयत में इस हक़ीक़त की तरफ इशारा हैः—

"ऐ ईमान वालो! तुम पर भी रोज़े उसी तरह फ़र्ज़ किये गये जिस तरह तुम से पहले लोगों पर फ़र्ज़ किये गये थे ताकि तुम परहेज़गारी हासिल करो।"

अगर नमाज़ ज़ाहिरी बराबरी पैदा करती है तो रोज़ा अन्दुरूनी बराबरी की बुनियाद डालता है। इसकी बदौलत अमीर और ख़ुशहाल लोगों को अपने ग़रीब और भूखे भाईयों की तकलीफ में शरीक होने का मौक़ा मिलता है। वह सुबह से शाम तक भूखे और प्यासे रहकर उस तकलीफ का एहसास कर लेते हैं जो फ़ाक़े की वजह से उनके ग़रीब भाईयों को सताती रहती है। और इस तरह हमदर्दी का शौक़ उनके दिल में मौज़ें मारता है और वह नीचता जो फ़ाक़ा करने वाले लोगों की तरफ से उनके दिल में बस गई थी वह दूर हो जाती है।

(बक़िया .... रमज़ान का महीना और शबे क़द्र)

ख़ुदा के सामने अपने आमाल को सही करे। इस मसले में वह जितना अल्लाह की रहमत से फ़ाएदा उठा सकता है दूसरे ज़माने में नहीं उठा सकता। इस अज़ीम महीने की एक बड़ी ख़ास बात यह है कि इसमें शबे क़द्र भी है। यह वह मुबारक रात है जिसमें कुरआन करीम नाज़िल हुआ और रसूले अकरम[स०] के ज़रिये से सारी इन्सानियत को वह इलाही क़ानून हासिल हुआ जो क़यामत तक के लिए आख़िरी है। (यानी इसके बाद अब कोई नयी शरीयत या क़ानून नहीं आने वाला है) अल्लाह ने शबे क़द्र को ऐसे एक हज़ार महीनों से अफ़ज़ल और बेहतर क़रार दिया है जिसमें कोई शबे क़द्र मौजूद न हो। इस बात में बहुत से क़ौल है कि शबे क़द्र कौन सी रात है? और किस महीने की रात है? मगर ज़्यादा तर मुहद्दिसीन और मुफ़स्सिरीन का यही कहना है कि यह मुबारक रात रमज़ान ही में है और ख़ुदा के इस इरशाद से भी इसकी ताईद होती है कि कुरआन को रमज़ान में नाज़िल किया गया हैः—

"वह रमज़ान का महीना है जिसमें कुरआन नाज़िल किया गया।" (बक़रः—105)

दूसरी जगह यह भी फ़रमाया गया है किः—

"हम ने उस (कुरआन) को शबे क़द्र में उतारा है।" (क़द्र—1)

यानी हमने कुरआन को शबे क़द्र में नाज़िल किया है। जब इन दोनों आयतों के मतलब को मिलाकर देखा जाता है तो यह बात साफ तरीक़े पर समझ में आती जाती है कि शबे क़द्र रमज़ान ही में है।

इस मसअले में भी कई क़ौल हैं कि शबे क़द्र रमज़ान की किस रात का नाम है मगर ज़्यादातर लोग इसी नज़रिये के क़ायल हैं कि यह रात रमज़ान के आख़िरी दस दिनों में है और यह इकाई की रात है यानी इक्कीसवीं, तेईस्वीं, पच्चीसवीं, सत्ताईस्वीं या उन्तीस्वीं रातों में से ही कोई रात है।

मुख़्तसर ये कि असली शबे क़द्र को इन रातों में छिपा दिया गया है ताकि लोग इस रात की बुज़ुर्गी और फ़ज़ीलत और सवाब को हासिल करने के लिए हर रात में इबादत करते रहें और ज़्यादा से ज़्यादा सवाब हासिल करें। एक हदीस में सरवरे दो आलम[स०] ने फरमायाः "जो शख़्स शबे क़द्र में ईमानदारी और सच्ची नीयत के साथ ख़ुदा की इबादत करता है उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जाते हैं। मगर इसका मतलब यह हरगिज़ नहीं हो सकता कि लोग इत्मिनान से गुनाह करते रहें और यह समझ लें कि जब शब्र क़द्र आएगी तो सब गुनाह माफ़ करा लेंगे। हक़ीक़त में गुनाह सिर्फ़ उन लोगों के माफ़ किये जाएंगे जो अपने गुनाहों पर दिल से अफ़सोस करे और शर्मिन्दा हों और यह तय कर लें कि आईन्दा कोई गुनाह न करेंगे। अल्लाह हम सब मुसलमानों को इस अज़ीम रात की बरकतों से फ़ाएदा उठाने की तौफ़ीक़ अता करे और हमें अपने सच्चे बन्दों में शुमार कर ले। ◆◆◆

इज्तेहाद

हुज्जतुल इस्लाम वलमुस्लिमीन मौलाना सै0 हसन नक़वी इज्तेहादी

आज दुनिया का हर इन्सान एका चाहता है और वही इन्सान ऊँचे ख़याल वाला समझा जाता है जिसकी कोशिशें और मेहनतें सिर्फ़ इस मक़सद से हों कि पूरी इन्सानियत एक ही राह पर चल पड़े, हक़ीक़त में दुनिया में जिस तरह इन्सान कई सूरतों और हैसियतों के नहीं इसी तरह अलग–अलग ख़याल वाले भी नहीं। हर इन्सान अपनी ज़िन्दगी के हर अहम वाक़िए को, हर नए राज़ को अपनी ज़िन्दगी का आख़री वाक़िआ और सरमाया समझता है लेकिन अस्ल में वह उसकी ज़िन्दगी के किसी और वाक़िए की पहली कड़ी होता है। इन्सान अपनी ज़िन्दगी के किसी अनजाने मगर होने वाले वाक़िए के लिए बहुत से क़ानून बनाता है लेकिन कोई ऐसी छुपी ताक़त जिसको वह उस वक़्त समझ भी नहीं सकता, उसके बनाए क़ानूनों को इस तरह फैला देती है जिस तरह किसी ने बहुत ही एहतियात से एक तरीक़े में बहुत से मोतियों को पिरो दिया हो और ज़माने के हादसों ने उन्हें बिखेर दिया हो, लेकिन इसके बाद भी बहुत से इन्सान ऐसे हैं जो नहीं समझते और उस छुपी ताक़त से पूरी तरह मुक़ाबला करते रहते हैं लेकिन हर बार हार का मुँह देखना पड़ता है क्योंकि उस वक़्त से और इन्सान की ताक़त से कोई मुक़ाबला ही नहीं हो सकता। सारे इन्सानों के ज़हन अलग–अलग नहीं हर शख़्स अपनी ज़हनी कोशिशों और मेहनतों का नतीजा खुद हासिल करना चाहता है लेकिन ऐसे इन्सान को अक्सर हार का मुँह देखना पड़ता है। यह ज़रूर है कि एक इन्सान की दिमाग़ी ताक़तें, ज़हनी क़ूव्वतें और फ़िक्र के फैलाव अगर काम करने लगें तो फिर मैं तो यह कहता हूँ कि वह दुनिया की सारी अच्छाईयों का आईना बन जायेगा इस तरह कि अख़लाक़ और मुहब्बत की ख़ूबसूरती उसमें नज़र आयेगी। ईमान और वफ़ादारी झलकती नज़र आयेगी, ईसार और बराबरी की तस्वीर नज़र आयेंगी। सब्र व मज़बूती क़दम चूमेंगे, क़दमों के ठहराव और ख़ुशी व मसर्रत साया देगी मगर हक़ीक़त तो यह है कि ऐसे इन्सान की कामियाबी तक़रीबन नामुमकिन सी नज़र आती है अक्सर यह देखा गया है कि इन्सानी दिमाग़ किसी ख़ास मक़सद के लिए नामालूम किन–किन तरीक़ों से कैसी–कैसी एहतियात करते हुए कुछ चीज़ें तैयार करता है और नतीजे का इन्तिज़ार करता रहता है लेकिन कोई दूसरा शख़्स उन तरीक़ों से ही कोई दूसरा नतीजा निकलना चाहता है इस तरह इन दोनों में टकराव पैदा हो जाता है तो कभी तो दोनों कामियाब हो जाते हैं और कभी एक कामियाब होता है लेकिन अगर इन्सान का दिमाग़ इस बात पर ग़ौर करता कि अगर इतनी बड़ी दो ताक़तें एक होकर किसी नतीजे तक जाना चाहेंगी तो दोनों के तरीक़े रास्ता दिखाने वाले बन कर मन्ज़िले मक़सूद तक पहुँचा देंगे। यह इन्सान की ना समझी और पस्त ख़याली है कि वह ख़ुद ही अपनी मेहनतों का फल हासिल करना चाहता है। इस हाल में कि उसको यह तजुर्बा भी हासिल हो चुका है कि इस तरह मक़सद भी हासिल नहीं होता, मगर फिर भी वह अपने अक्खड़पन से ज़िद

पर अड़ा रहता है हक़ीक़त में बिना एक दूसरे का हाथ बटाये दुनिया की ज़िन्दगी नहीं गुज़ारी जा सकती। इन्सान के ज़हन में लाखों ख़याल आते हैं वह किसको इख़्तियार करे और किसको छोड़े? हक़ीक़त में इत्तेहाद के बिना दुनियावी ज़िन्दगी गुज़ारना नामुमकिन है एक अकेला इन्सान सिर्फ़ अपनी ही ज़रूरतों को पूरा नहीं कर सकता। एक इन्सान अपने लिए खेती भी करे, कपड़े का भी इन्तिज़ाम करे, यह नामुमकिन है बल्कि दुनिया की ज़िन्दगी यूँ ही सुधर सकती है कि कोई हमारे लिए ख़ाने का इन्तिज़ाम करे और हम किसी के लिए कपड़ों का इन्तिज़ाम करें, ताकि कारोबारी ज़िन्दगी संवर सके। कभी ऐसा होता है कि इन्सान एक काम को अपने फ़ायदे का समझ कर करता है लेकिन उसमें नुक़सान होता है इसलिए ज़रूरत पड़ी कि कोई इससे बड़ी ताक़त हो जो उससे इस तरह जुड़ी हो कि उसकी कमी पूरी हो जाए ताकि दुनिया में छुटकारा हो सके। यह बात बिल्कुल साफ है कि एक ताक़त के बजाए दो ताक़तें ज़्यादा काम आने वाली होती हैं, तो अगर दो से ज़्यादा ताक़तें मिल जायें तो वह उससे ज़्यादा फ़ायदे वाली होंगी, लेकिन अगर दुनिया की सारी ताक़तें एक होकर काम करें तो यक़ीनन वह कामयाब होंगी और इस जमाअत की हर फ़र्द के दिल में हमदर्दी का शौक़ होना चाहिए जो कि इन्सानियत का जौहर है यानी अपने फ़ायदे के साथ–साथ दूसरे के फ़ायदे का भी ख़याल भी सामने हो, तब तो यह जमाअत कामयाब हो सकती है वरना कामयाबी हरगिज़ नसीब न होगी, जैसे एक बहुत ही भारी पत्थर है जो कि हम से अकेले हरगिज़ नहीं उठ सकता, लेकिन अगर हम एक साथ मिल कर काम करें और कुछ लोगों को अपना साथी बनाएं तो वह पत्थर जिस मक़सद के लिए हम लोग उठा रहे हैं उठ जाएगा और इस तस्वीर में दूसरा पहलू भी साफ़ है वह यह कि अगर पत्थर उठाने वाले उन लोगों में एक की नियत हो कि पूरब की तरफ़ ले जायेगा और दूसरे का ख़याल हो कि पच्छिम की तरफ ले जाए तो यक़ीन मानिये कि वह पत्थर हरगिज़ हरकत न करेगा लेकिन अगर सबकी कोशिशें यह हों कि किसी एक ही तरफ ले जायेंगे तो वह आसानी से उठ जायगा बस यही हाल इस दुनिया की ज़िन्दगी का है अगर हम अकेले ज़िन्दगी गुज़ारना चाहें तो हरगिज़ नहीं गुज़रेगी। लेकिन अगर सब एक होकर एक साथ काम करें तो बेशक यह ज़िन्दगी देखने लायक़ होगी मालूम होता है कि एका एक ऐसी देखने लायक़ चीज़ है जिसकी तरफ हर दिल की कशिश होना चाहिए हम देखते हैं कि अलग–अलग पेड़ एक बाग़ नहीं कहे जाते, लेकिन अगर एक जगह पर हों जाएं तो इस क़ाबिल हो जाते हैं कि शौक़ीन लोगों की तफ़रीहगाह बनें। कई फूलों में यह ख़ूबी नहीं होती कि ख़ूबसूरत गले को ख़ूबसूरती बख़्शें लेकिन जिस वक़्त एक धागे में पिरोकर किसी हार की शक्ल में आ जाते हैं तो उस वक़्त इस क़ाबिल हो जाते हैं कि वह गले की ज़ीनत बख़्शें, बिखरे हुए मोती देखने लायक़ नहीं होते लेकिन अगर एक हो जाएं तो दुनिया की निगाहों में इतने महबूब हो जाते हैं कि गले का हार बन जाएं नर्म व नाज़ुक अलग–अलग डालियाँ और फूल इस क़ाबिल नहीं होते कि किसी के घर को ख़ूबसूरत बनाऐं लेकिन जिस वक़्त एक होकर गुलदस्ता बन जाते हैं तो ज़माने की ख़ूबसूरती बन जाते हैं। इन्सान के बदन के हिस्से अगर अलग हो जाएं तो सिर्फ मिट्टी के टुक्ड़े हैं सारी मख़लूक़ में सबसे नीच लेकिन अगर एक हो जाएं तो अशरफ़ुल मख़लूक़ात कहने के क़ाबिल, तो अगर सारे इन्सान इत्तेहाद का जामा पहन लें तो फिर मेरी अक़्ल हैरान है कि उनकी क्या हालत होगी।

●●●

इदारा

मुख्य समाचार

इस्लाम फ़िक्र के साथ अमल की दावत देता है।

30 जून 2008ई0 को जामिया मिल्लिया इस्लामिया नई दिल्ली में आई0एच0एफ0, दिल्ली की तरफ़ से "तहफ़्फ़ुज़ व तरक़्क़ी दुख़्तरान" के उनवान से एक क़ौमी मुज़ाकरा मुनअक़िद किया गया इस मौक़े पर तक़रीर करते हुए झारखण्ड के गवर्नर जनाब सै0 सिब्ते रज़ी साहब ने कहा कि तहफ़्फ़ुज़ व तरक़्क़िये दुख़्तर का मसला सिर्फ़ क़ौमी मसला नहीं बल्कि बक़ाए इन्सानी का मसला है और हमें इस पर पूरा ध्यान देना होगा। उन्होंने कहा कि इस्लाम एक ऐसा मज़हब है जो फ़िक्र के साथ अमल का शौक़ दिलाता है जबकि हम अमली मैदान में बहुत पीछे हैं इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि हम न सिर्फ़ लड़कियों की हिफ़ाज़त करें बल्कि उनकी तरक़्क़ी के लिए भी पूरी तरह लगे रहें। इस मौक़े पर तक़रीर करते हुए डा0 करीम नजफ़ी, कल्चरल काउन्सिलर जमहूरी इस्लामी ईरान ने कहा कि आज मुसलमानों में यह बात फैलाई जा रही है कि इस्लाम चौदह सौ साल पुराना है मज़हब है इसलिए आज के दौर में इस पर अमल करना मुश्किल है मगर मैं आपको बताना चाहता हूँ कि यह जमहूरी इस्लामी ईरान उसी चौदह सौ साल पुराने मज़हब के क़ानूनों पर अमल कर रहा है और पूरी तरह कामयाब है उन्होंने कहा कि ईरान में इस्लामी इन्क़ेलाब के बाद लड़कियों की तालीम पर बहुत ज़ोर दिया गया है और ईरानी कालेजों में आज भी लड़कियों की गिनती लड़कों से ज़्यादा है और हर मैदान में ईरानी औरतों की फ़आलियत देखी जा सकती है।

इस मौक़े पर जमाअते इस्लामी हिन्द के सिक्रेटरी मौलाना रफ़ीक़ क़ासमी ने कहा कि बड़े अफ़सोस की बात है कि हम जिस मज़हब के मानने वाले हैं उसका रसूल[स0] तो अपनी बेटी की पैदाईश पर ख़ुशी का इज़हार करता है और हम ग़म मनाने लगें। आपको चाहिए कि इस मौक़े पर ख़ुशी मनाएं कि हो सकता है हमारी इस बेटी की कोख से कोई ऐसी औलाद पैदा हो जो कल की नामवर और क़ाबिले एहतेराम शख़्सियत बन जाए। उन्होंने कहा कि आज दुनिया में 56 इस्लामी मुल्क हैं मगर इन सब में ईरान एक अकेला ऐसा मुल्क है जिसका रहबर आयतुल्लाह सै0 अली ख़ामेना–ई जैसा आलिमे दीन है जो किसी माँ का ही बेटा है जो कभी जंग के मैदान में दुश्मनों से लड़ा, नमाज़ में इमामे जमाअत रहा, सदारत की कुर्सी पर पहुँचने के बाद रहबरे इस्लाम बना। आलमे इस्लाम की यह शख़्सियत भी तो किसी औरत की कोख से ही पैदा हुई है।

प्रोग्राम का तआरुफ पेश करते हुए इमाम हुसैन फाउण्डेशन के जनरल सिक्रेटरी जनाब अली इमाम साहब ने कहा कि हम इक्कीसवीं सदी में साँस ले रहे हैं जहाँ साईन्सी ईजादें अपनी बुलन्दी पर पहुँच गई हैं मगर लड़कियों के साथ आज बुरा सुलूक किया जा रहा है या यूँ कहिये कि जिहालत के ज़माने और इस ज़माने में बस फ़र्क़ यह है कि 1500 साल पहले लड़कियों को क़ब्रों में ज़िन्दा दफ़्ना दिया जाता था और इस साईन्सी दौर में माँ के पेट में ही उसकी साँस रोक दी जाती है। उन्होंने कहा कि हम हिन्दुस्तान का हिस्सा हैं और इसकी तरक़्क़ी और खुशहाली में हमारा शामिल होना हमारा फ़रीज़ा है इसलिए आई0एच0एफ0 ने इस अहम मौज़ू पर इस मुज़ाकरे को मुनअक़िद किया ताकि इस प्रोग्राम में ज़ाहिर किये जाने वाले ख़यालात से हिन्दुस्तान की अवाम फ़ैज़याब हो सके।

ख़ानदाने इज्तेहाद पर तहक़ीक़ी काम शुरु

जी0सी0 युनिवर्सिटी लाहौर पाकिस्तान से "ख़ानवादए इज्तेहाद के उर्दू अदब में इल्मी व अदबी ख़िदमात का जाएज़ा" के उनवान से पी0एच0डी0 के लिए जनाब सै0 इमरान हैदर का मौज़ू मन्ज़ूर किया गया है। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में ख़ानवादए इज्तेहाद पर यह इस सतह का पहला इल्मी और तहक़ीक़ी काम है इस सिलसिले में अगर किसी साहब के पास कुछ मवाद ख़ानदाने इज्तेहाद से मुताल्लिक़ मौजूद हो तो बराए करम मक़ाला निगार के नीचे दिये पते पर पहुँचाने की ज़हमत गवारा फ़रमाएं।

प्रोफेसर सैय्यद इमरान हैदर
7–बी, न्यु शालीमार टाउन,
गुल्शन रावी, लाहौर, पाकिस्तान
मोबाइल: 0092–3334318858

ईरान दुश्मनों का मुक़ाबला अपनी ताक़त से करेगाः

डा0 अहमदी नेजाद

ईरान के राष्ट्रपति अहमदी नेजाद ने मग़रिबी मुल्कों की तरफ से ऐटमी प्रोग्राम को बन्द किये जाने के लिए दो हफ़्तों की डेडलाईन को ठुकराते हुए कहा कि ईरान दुश्मनों का मुक़ाबला अपनी ताक़त से करेगा। मग़रिबी मुल्कों की तरफ से ईरान को डेडलाइन 19 जुलाई को दी गई थी। ईरान के अलावा रूस ने भी दो हफ़्तों की डेडलाइन की मुख़ालेफ़त की है। अहमदी नेजाद ने डेडलाइन के ख़त्म होने से ठीक पहले दिये गये बयान में किसी मुल्क का नाम लिये बग़ैर कहा कि ऐटमी प्रोग्राम तो सिर्फ़ एक बहाना है। अस्ल बात यह है कि मग़रिबी ताक़तें ईरान को पिछले 30 साल से हराने की कोशिश कर रही हैं और नाकामी पर जवाज़ तलाश रही हैं।

मस्जिदुल अक़्सा के शहीद होने का ख़तरा

फिलस्तीन के रुकने पार्लियामेण्ट अहमद अबू हलीज़ ने कहा है कि इस्राईल का सुरंग प्रोजेक्ट अलक़ुद्स में मस्जिदे अक़्सा की बुनियादों तक पहुँच गया है। अहमद अबू हलीज़ ने कहा कि इस्राईल का सुरंग प्रोजेक्ट मस्जिदुल अक़्सा की इमारत को नुक़सान पहुँचा रहा है जिसकी वजह से उसके मुनहदिम हो जाने का ख़तरा पैदा हो गया है। चूँकि इस्राईली मस्जिदुल अक़्सा के नीचे से जो इस्लाम की तीसरी बड़ी मस्जिद है सुरंग खोद रहे हैं इमारत की दीवारों में कई गहरी दरारें देखी जा सकती हैं ख़ास तौर पर मस्जिद की जुनूबी दीवार को बहुत नुक़सान पहुँचा है। मस्जिदुल अक़्सा में इस्राईली फौजियों की बारबार मौजूदगी का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि मस्जिद ख़तरे में है और इस्राईली फौज ने अलक़ुद्स के शहरियों को मस्जिद में नमाज़ अदा करने से रोक दिया है।

आलमी बिरादरी मुस्लिम दुनिया के ख़िलाफ़ साज़िश कर रही हैः

सै0 हसन नस्रुल्लाह

हिज़्बुल्लाह के सरबराह सै0 हसन नस्रुल्लाह ने कहा कि अरबी और मुस्लिम दुनिया पर चोट लगाने के लिए बहुत बड़े पैमाने पर बैनुलअक़्वामी मुदाख़लत की जा रही है। सूडान के वफ़्द के साथ एक मुलाक़ात के दौरान हसन नस्रुल्लाह ने कहा कि सूडान के मामलों में बैनुलअक़्वामी साज़िश का पता चलता है उन्होंने कहा कि मग़रिबी दुनिया एक मुल्क और एक इलाक़े से कहीं ज़्यादा दाख़ली इस्तेहकाम को ख़तरे में डालना चाहती है। उन्होंने कहा कि बड़ी मग़रिबी ताक़तें मुख़्तलिफ मुल्कों के क़ौमी इत्तेहाद को इख़्तेलाफ़ात, जंगों और नस्ली व तबक़ाती तश्द्दुद के ज़रिये इख़्तेलाफ़ात और इन्तेशार के ख़तरे से दोचार करना चाहती है। यह ताक़तें कहीं सियासी बोहरान तो कहीं दूसरे तरीक़ों से इन्तेशार के हालात पैदा कर रही हैं ताकि अमरीका और इस्राईल के मफ़ादात को पूरा किया जा सके। हसन नस्रुल्लाह ने कहा कि हिज़्बुल्लाह सूडानी अवाम और सदर उमर हसन अलबशीर की भरपूर ताईद करती है और उन पर ज़ोर देती है कि वह अपने बचाव में अपने दाख़ली इत्तेहाद को बरक़रार रखें।

उन्होंने मुस्लिम और अरब मुल्कों पर भी ज़ोर दिया कि वह मग़रिब के झूठे इल्ज़ामों का डटकर मुक़ाबला करें। सूडान के सदारती क़ासिद डाक्टर क़ुतुब अल–महदी और उनकी ज़ेरे क़यादत वफ़्द ने शैख हसन नस्रुल्लाह से मुलाक़ात की। इस मुलाक़ात में सदर उमर अल–बशीर के ख़िलाफ़ बैनुलअक़्वामी फौजदारी अदालत के इस्तेग़ासा के ताज़ा तरीन दावे से पैदा हुई सूरते हाल का जाएज़ा लिया गया।